Year-7 Volume: III, July-September, 2025 Issue-27 ISSN: 2582-1296 (Online)
The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities
Website: www.theasianthinker.com **Email**: asianthinkerjournal@gmail.com

16. मानव के हिताहित में वास्तु का सन्निवेश
(वैदिक वास्तोष्पति से वास्तुपुरुष-मण्डल तक : एक अध्ययन)

डॉ. अभिषेक पाण्डेय
शासकीय संस्कृत महाविद्यालय, इन्दौर

सारांश

भारतीय वास्तु-परम्परा का ऐतिहासिक एवं शास्त्रीय अनुशीलन यह स्पष्ट करता है कि इसे केवल गृह-निर्माण पद्धतियों, दिशानिर्देशों अथवा शुभाशुभ फलादेशों के सीमित दायरे में नहीं आंका जाना चाहिए। वैदिक, पौराणिक एवं स्थापत्य ग्रन्थों का विस्तृत और तुलनात्मक अध्ययन यह प्रदर्शित करता है कि इसमें भूमि-चयन, निवास-संरचना, मानव-शरीर की स्थापत्यिक संकल्पना, माप-तोल, प्राकृतिक पर्यावरण, सामाजिक उपयोगिता तथा अनुष्ठानिक विधानों पर एक सुदृढ़ और बहुआयामी चिन्तन विकसित हुआ है।

यह शोध-पत्र वास्तु की विशद संकल्पना को ऋग्वेद के 'वास्तोष्पति' सूक्त से आरम्भ करके अथर्ववेद की शाला-परम्परा, पौराणिक 'वास्तुपुरुष' तथा 'वास्तुपुरुष-मण्डल' की सूक्ष्म ज्यामितीय एवं स्थापत्यिक संरचना तक विश्लेषित करता है। ऋग्वेद में वास्तोष्पति देव से मानव (द्विपद) एवं पशु (चतुष्पद) दोनों के संवर्धन व कल्याण की मंगल-कामना व्यक्त की गई है[1], वहीं अथर्ववेद के शाला-सूक्तों में आवास, स्थापत्यिक माप तथा निवास-क्षेत्र की विविध छवियाँ प्राप्त होती हैं[2]।

मत्स्यपुराण [3] के 252वें तथा 253वें अध्यायों में वास्तु का उद्भव, अठारह वास्तु-उपदेष्टा आचार्यों की नामावली, 81-पद विन्यास तथा 64-पद प्रासाद-विन्यास का विस्तृत विवेचन उपलब्ध है[4]। बृहत्संहिता में भूमि-परीक्षा, मण्डल-संविधान, मर्मस्थान-रक्षा, द्वार-नियोजन, द्वार-वेध, वृक्ष-रोपण एवं निर्माण-प्रक्रिया के व्यापक आयामों को निरूपित किया गया है[5]। प्रस्तुत अध्ययन इन शास्त्रीय मानकों को आधुनिक भवन-स्वास्थ्य, प्राकृतिक प्रकाश, संवातन, तापीय अनुकूलता, हरित स्थल तथा शहरी जनस्वास्थ्य जैसे समकालीन विमर्शों से तुलनात्मक रूप से सम्बद्ध करता है। इस प्रकार 'हिताहित' की अवधारणा को शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, आर्थिक तथा पारिस्थितिकीय—इन पाँच मूलभूत आयामों में विश्लेषित करने वाला एक शोध-मॉडल यहाँ प्रस्तुत किया गया है।

बीजशब्द: वास्तु, वास्तोष्पति, वास्तुपुरुष, वास्तुपुरुष-मण्डल, मर्मस्थान, भूमि-परीक्षण, स्थापत्य, पर्यावरण, स्वस्थ आवास, भारतीय ज्ञान-परम्परा।

Year-7 Volume: III, July-September, 2025 Issue-27 ISSN: 2582-1296 (Online)
The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities
Website: www.theasianthinker.com Email: asianthinkerjournal@gmail.com

प्रस्तावना :

वास्तु और मानव-कल्याण : मानव का निवास-स्थान केवल वर्षा, धूप या शीत से सुरक्षा प्रदान करने वाला कोई भौतिक ढाँचा मात्र नहीं है। यह दैहिक सुरक्षा, पारिवारिक संगठन, सामाजिक प्रगाढ़ता, आर्थिक समृद्धि, विश्राम, ज्ञान-साधना, आध्यात्मिक अनुष्ठान तथा सांस्कृतिक परम्पराओं की निरन्तरता का मूल आधार निर्मित करता है। इसी कारण भारतीय मनीषा ने 'गृह' को मात्र ईंट, पत्थर, छड़ों और स्तम्भों की निर्जीव संरचना न मानकर एक जीवन्त, सामाजिक-सांस्कृतिक एवं चैतन्य इकाई के रूप में अंगीकार किया है। आधुनिक स्वस्थ-आवास सम्बन्धी वैश्विक विमर्श भी निवास को मानव-स्वास्थ्य, शारीरिक सुरक्षा, ऊर्जा-संरक्षण तथा पर्यावरणीय संतुलन से अभिन्न रूप से जोड़ता है। [6]विश्व स्वास्थ्य संगठन के दिशानिर्देशों के अनुसार समुचित वायु-संचार, पर्याप्त प्राकृतिक प्रकाश, तापीय अनुकूलता, पेयजल सुरक्षा, स्वच्छता, भीड़भाड़-रहित स्थान तथा स्वास्थ्यवर्धक शहरी वातावरण ही जन-स्वास्थ्य के प्राथमिक निर्धारक हैं[7]।

इस पृष्ठभूमि में प्रस्तुत अध्ययन का मुख्य अनुसंधान प्रश्न यह है—वास्तु की शास्त्रीय व्यवस्था मानव के 'हिताहित' (हित और अहित) में किस प्रकार प्रभावी भूमिका निभाती है? इस प्रश्न का उत्तर केवल शुभ-अशुभ के पारम्परिक फलादेशों तक सीमित रहकर नहीं, अपितु उस स्थानिक विन्यास के सामाजिक, पर्यावरणीय एवं सांस्कृतिक प्रकार्यों के विश्लेषण द्वारा खोजा जाना चाहिए।

वास्तु शब्द : व्युत्पत्ति एवं अर्थ-परम्परा : संस्कृत शब्दकोशों के अनुसार 'वास्तु' शब्द की व्युत्पत्ति 'वस्' (निवासे) धातु से सिद्ध होती है, जिसका सीधा सम्बन्ध निवास करने अथवा रहने के स्थान से है। शब्दकल्पद्रुम आदि प्रामाणिक कोशों में 'वास्तु' का अर्थ वह स्थान, भवन या भूमि है जहाँ प्राणी स्थायी रूप से निवास करते हैं[8]। स्थापत्यिक एवं शास्त्रीय शोध की दृष्टि से यहाँ 'वस्तु' तथा 'वास्तु' के मध्य सूक्ष्म अर्थ-भेद को रेखांकित करना अत्यधिक आवश्यक है:

- **वस्तु:** व्यापक दार्शनिक अर्थ में पदार्थ, द्रव्य, सत्ता या किसी वास्तविक अस्तित्वमान तत्त्व को निरूपित करता है।
- **वास्तु:** विशिष्ट अर्थ में मानव या प्राणियों के निवास-स्थान, निर्मित गृह अथवा योजनाबद्ध आवास को अभिहित करता है।

इसी शास्त्रीय परिभाषा का समर्थन इस प्रसिद्ध वचन से होता है: ‘वसन्ति प्राणिनो यत्र।’[9]

अतः वास्तु को केवल एक 'भौतिक निर्माण तकनीक' मानने की अपेक्षा 'मानव-आवास हेतु सुनियोजित एवं संवर्धित स्थान' के रूप में विश्लेषित करना अधिक सार्थक एवं वैज्ञानिक है। वेदान्तसार के आधार पर 'वस्तु' शब्द को परमब्रह्म के दार्शनिक स्वरूप से सम्बद्ध किया गया है:

‘वस्तु सच्चिदानन्दाद्वयं ब्रह्म। अज्ञानादिसकलजडसमूहोऽवस्तु॥’[10]

The Asian Thinker

Year-7 Volume: III, July-September, 2025 Issue-27 ISSN: 2582-1296 (Online)
The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities
Website: www.theasianthinker.com **Email**: asianthinkerjournal@gmail.com

यद्यपि वेदान्त में प्रयुक्त 'वस्तु' (परम सत्-चित्-आनन्द स्वरूप ब्रह्म) और स्थापत्य में प्रयुक्त 'वास्तु' (निर्मित संरचना/निवास) पारिभाषिक रूप से भिन्न हैं, तथापि भारतीय ज्ञान-परम्परा में 'स्थान' को निर्जीव या शून्य न मानकर उसे चेतना और सत्ता के व्यापक परिप्रेक्ष्य में देखा गया है। इसी दार्शनिक विचार-श्रृंखला का संकेत प्राचीन शास्त्रीय अनुश्रुतियों में भी प्राप्त होता है[11]।

वैदिक परम्परा में वास्तोष्पति : वास्तु और कल्याण : भारतीय वास्तु-चिन्तन की प्राचीनतम एवं ऐतिहासिक पृष्ठभूमि ऋग्वेद के 'वास्तोष्पति-सूक्त' में निहित है। ऋग्वेद में वास्तोष्पति को निवास-क्षेत्र के संरक्षक देवता के रूप में सम्बोधित कर उनकी स्तुति की गई है। सूक्त के प्रथम मन्त्र में रोग-रहित, सर्वकल्याणकारी गृह तथा मानव एवं पशु दोनों के निरोग रहने की प्रार्थना की गई है:

‘वास्तोष्पते प्रति जानीह्यस्मान् स्वावेशो अनमीवो भवा नः। शं नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे।।’[12]

इस वैदिक ऋचा का स्थापत्यिक एवं पर्यावरणीय महत्त्व यह है कि इसमें वास्तु का मूल केन्द्र 'सुरक्षित आवास' तथा 'प्राणियों का सर्वांगीण हित' है। वास्तुशास्त्र की व्यापक ऐतिहासिक जड़ें अथर्ववेद के शाला-सूक्तों में गहराई से जमी हैं। अथर्ववेद में गृह-निर्माण, शाला-विन्यास, गृहपति के दायित्व, निवास की स्थिति, स्थान-मापन तथा भवन के कार्यात्मक क्षेत्रों का सुव्यवस्थित वर्णन प्राप्त होता है:

‘इहैव ध्रुवा प्रतितिष्ठ शालेऽश्वावती गोमती सूनृतावती।’[13]

इससे स्पष्ट होता है कि प्रारम्भिक वैदिक स्थापत्य चिन्तन स्थान-नियोजन, सुरक्षा और कार्यात्मक स्थान-विभाजन से गहराई से सम्बद्ध था।

वास्तुपुरुष : उत्पत्ति तथा प्रतीकात्मक मण्डल व्यवस्था

वास्तुपुरुष की उत्पत्ति एवं संकल्पना से सम्बद्ध पौराणिक आख्यान मत्स्यपुराण के 252 (1-19) वें अध्याय में उल्लिखित है। यह कथा भगवान् शंकर तथा अन्धकासुर के भीषण युद्ध के प्रसंग में आती है। युद्ध के समय शिव के ललाट से गिरे स्वेद-बिन्दु से एक विराट, भयंकर जीव उत्पन्न हुआ, जिसने अपनी असीम क्षुधा और आकार से सम्पूर्ण पृथ्वी एवं आकाश को आच्छादित करने का प्रयास किया। तब समस्त देवगण ने एकत्रित होकर उसे अधोमुख भूमि पर स्तम्भित कर दिया। जिस-जिस स्थान पर जो-जो देवता स्थित हुए, वे उस स्थान के अधिष्ठाता बने और वही वास्तु के विभिन्न अंग कहलाए। तत्पश्चात् देवताओं ने उसे वास्तु-पूजा एवं गृह-बलि ग्रहण करने का अधिकार प्रदान किया।

इस पौराणिक आख्यान को केवल एक धार्मिक कथा मानने के स्थान पर प्रतीकात्मक स्थापत्य-विज्ञान की दृष्टि से विश्लेषित किया जाना चाहिए। अनियन्त्रित प्राकृतिक शक्तियों एवं अमर्यादित रिक्त स्थान को मापित, विभाजित और सुव्यवस्थित स्थापत्य-क्षेत्र में रूपान्तरित करना ही वास्तुपुरुष-मिथक की मूल अवधारणा है। पौराणिक स्तर पर 'देवताओं द्वारा अनियंत्रित इकाई का स्तम्भन' तथा स्थापत्यीय स्तर पर 'मण्डल में पदों का सीमांकन व विभाजन' एक-दूसरे के पूरक रूपक हैं।

The Asian Thinker

मत्स्यपुराण में वास्तुशास्त्र के 18 पौराणिक उपदेष्टा आचार्यों की सूची भी दी गई है: भृगु, अत्रि, वसिष्ठ, विश्वकर्मा, मय, नारद, नग्नजित्, शंकर, इन्द्र, ब्रह्मा, कुमार, नन्दीश्वर, शौनक, गर्ग, वासुदेव, अनिरुद्ध, शुक्र और बृहस्पति[14]। यह नामावली सिद्ध करती है कि वास्तुशास्त्र एक समृद्ध बहु-आचार्य परम्परा का परिणाम है।

वास्तुपुरुष-मण्डल : 81-पद और 64-पद का तुलनात्मक विवेचन

मत्स्यपुराण के 253 वें अध्याय में भूमि-शोधन के उपरान्त 81-पद (9×9) वाले वास्तुपुरुष-मण्डल के निर्माण का विधान है[15]। इसमें 45 देवताओं की स्थापना का विधान है। इसी ग्रन्थ के परवर्ती श्लोकों में प्रासाद (मन्दिर/राजप्रासाद) निर्माण हेतु 64-पद (8×8) वाले मण्डल का निर्देश दिया गया है[16]। मत्स्यपुराण सामान्य जन-आवास हेतु 81-पद को प्राथमिकता देता है, जबकि प्रासाद निर्माण हेतु 64-पद मण्डल की श्रेष्ठता को स्वीकार करता है[17]।

64-पद एवं 81-पद मण्डल का तुलनात्मक विश्लेषण

तुलनात्मक आधार	**64-पद मण्डल**	**81-पद मण्डल**	**अनुसंधानात्मक टिप्पणी**
ज्यामितीय संरचना	8 × 8 वर्ग विन्यास	9 × 9 वर्ग विन्यास	दोनों मण्डलों का प्रयोग-क्षेत्र एवं प्रयोजन भिन्न है।
मत्स्यपुराणीय विधान	प्रासाद एवं देवालय हेतु श्रेष्ठ	गृह, नगर एवं व्यापक स्थापत्य हेतु विहित	अध्याय 253 में दोनों के पृथक प्रयोग स्पष्ट हैं।
देवता-संयोजन	संक्षिप्त 64 पद देवता योजना	45 देवताओं का विस्तृत विन्यास	देवताओं की स्थिति मूल ग्रन्थ पाठ से सत्यापित है।
स्थापत्य दृष्टि	प्रासादिक/ज्यामितीय प्रतिमान	आवासीय स्थान-नियोजन का प्रतिमान	यह स्थानिक नियोजन का शास्त्रीय प्रारूप है।

वास्तुपुरुष और शरीर-रूपक : वास्तुपुरुष-मण्डल में भूमि के ज्यामितीय विभाजन को मानव-शरीर की संरचना के साथ प्रतीकात्मक रूप से एकीकृत किया गया है। मत्स्यपुराण के अनुसार वास्तुपुरुष के विभिन्न अंगों में देवताओं की अवस्थिति मानी गई है तथा मध्यवर्ती 9 पदों (ब्रह्मस्थान) में जगत्पिता ब्रह्मा की पूजा का विधान है:

'जयशक्रौ तथा मेढ्रे पादयोः पितरस्तथा। मध्ये नाभिपदे ब्रह्मा हृदये स तु पूज्यते॥'[18]

यह शरीर-रूपक तीन मुख्य अर्थ-स्तरों को उजागर करता है:

1. भूमि का मानवीकरण एवं उसे एक संवेदनशील इकाई के रूप में स्वीकार करना।
2. भवन के विभिन्न भागों को शरीर के अंगों की विशिष्ट कार्यात्मकता से सम्बद्ध करना।

Year-7 Volume: III, July-September, 2025 Issue-27 ISSN: 2582-1296 (Online)
The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities
Website: www.theasianthinker.com **Email**: asianthinkerjournal@gmail.com

3. केन्द्रीय स्थान ('ब्रह्मस्थान') को गृह के 'हृदय' के रूप में मानकर उसे खुला, स्वच्छ और भार-मुक्त रखने का स्थापत्यिक सिद्धान्त प्रस्तुत करना।

यद्यपि 'ब्रह्मस्थान' को सीधे किसी जैविक अंग का समतुल्य नहीं कहा जा सकता, तथापि स्थापत्यिक दृष्टि से यह केन्द्रीय आँगन, वायु-संचार और प्रकाश-वितरण का प्रमुख केन्द्र सिद्ध होता है।

वास्तुपुरुष-मण्डल एक स्थापत्यिक-आध्यात्मिक प्रतीक है, जो अव्यक्त ऊर्जा को व्यक्त निर्मिति में परिणत करने का प्रारूप प्रस्तुत करता है। आधुनिक भौतिकशास्त्र में फ्रिट्जॉफ काप्रा द्वारा प्रतिपादित ब्रह्माण्डीय स्पंदन (Cosmic Dance)[19] तथा पारम्परिक वास्तु-मण्डल के मध्य रूपकात्मक तुलना स्थापत्यिक ज्यामिति के दार्शनिक महत्त्व को रेखांकित करती है।

इसी वास्तु पुरुष और मण्डल विधान को वैदिक एवं उपनिषद् साहित्य में चेतना और स्थानिक वातावरण के मध्य गहरे अन्तर्सम्बन्धों को स्वीकार किया गया है। बृहदारण्यकोपनिषद् में आत्मा की अभिव्यक्ति मन, वाक् और प्राण के रूप में स्वीकार की गई है:

'एतन्मयो वा अयमात्मा वाङ्मयो मनोमयः प्राणमयः॥'[20]

पंचभूतों की सूक्ष्म अवस्था ही वाक् तत्त्व है, यही वाक् तत्त्व पंचभूतों की जननी है। पंच भूतों में आकाश प्रथम तत्त्व है। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि आकाश खाली स्थान का नाम नहीं है, अपितु यह एक सूक्ष्म तत्त्व है। शब्द को इसी का गुण कहा गया है। अतः वाक् या शब्द पंचभूतों का प्रतीक है। प्राण की क्रिया से वाक् तत्त्व से ही प्रपञ्च का उद्भव होता है। यह प्राण तत्त्व ही समस्त भूतों का विधारक तत्त्व है। विधारक तत्त्व ही शक्ति या देव के रूप में स्वीकृत किया गया है। इसलिए अन्य दृष्टि से यह सारा प्रपञ्च भूत और शक्ति रूप से द्विधा विभक्त है[21]।

मनोवैज्ञानिक युग के अनुसार इस प्राण शक्ति को साइकिक एनर्जी कहा जा सकता है[22]। यह प्राण तत्त्व सूर्य के केन्द्र में सन्निहित है - 'सविता वै देवानां प्रसविता।' यह सूर्य देव हिरण्यगर्भ के रूप में वर्णित हुआ है। सृष्टि के प्रादुर्भाव में इसी की प्रथम सत्ता रहती है - 'हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्।'[23]

वास्तुपुरुष सूर्य रूप ब्रह्मदेव का प्रतिरूप माना गया है। ब्रह्माण्ड की प्रतिकृति के रूप में महर्षियों ने वास्तु के प्रतिनिधि हेतु वास्तु मण्डल की संरचना स्पष्ट की है। इस सूर्य ब्रह्म की चिन्मय रश्मियाँ ही वास्तु मण्डल में निहित देवताएँ हैं। यही वास्तुपुरुष का वैदिक स्वरूप माना गया है।

वराहमिहिर ने वास्तु स्वरूप भवन आदि निर्मित करने हेतु वास्तु मण्डल में संस्थित देवताओं के अनुसार ईशान कोण से प्रारंभ कर उत्तरपर्यन्त भूखंड को पूर्व से पश्चिम तथा उत्तर से दक्षिण दिशाओं में नौ-नौ भाग करके उन पर वास्तु निर्माण कार्य करने का निर्देश दिया है[24]। इसके साथ ही वास्तु की संरचना के अनुरूप भूखंड अथवा ग्राम, नगर या देश के निर्माण हेतु भी विभिन्न प्रकार के तात्विक वास्तु मण्डल की रचना करके उस पर आवश्यकता के अनुसार निर्माण आदि सम्पन्न करना चाहिए।

Year-7 Volume: III, July-September, 2025 Issue-27 ISSN: 2582-1296 (Online)
The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities
Website: www.theasianthinker.com Email: asianthinkerjournal@gmail.com

मत्स्यपुराण [25] के अन्तर्गत - 'एकोनपञ्चाशत्पद, चतुष्षष्टिपद, एकाशीतिपद, शतपद, एक विंशांतरशतपद, चतुःश्चत्वारिंशोत्तरशतपद, एकोनसप्तत्युत्तरशतपद, षण्णवत्युत्तरशतपद, सहस्रपद, लक्षपद' आदि वास्तु निर्माण के भेद कहे गए हैं। इनमें से चौंसठों सौ पद वाले वास्तु मण्डल के आधार पर प्रदेश अथवा देश की स्थापना करनी चाहिए - 'देशसंस्थापने वास्तु चतुश्चत्वारिंशतं भवेत्।'[26]

वास्तु-आकृतियाँ और उनका महत्व : वास्तु की संरचना करते समय भवन अथवा अन्य प्रकार के वास्तु के लिए आकृतियों का ध्यान रखा जाना भी अत्यावश्यक माना गया है, क्योंकि इन आकृतियों के अनुसार ही उस भवन में अथवा वास्तु में निवास करने वालों का हिताहित सन्निहित होता है। ये आकृतियाँ प्रमुख रूप से सोलह प्रकार की हैं -

समायत, समचतुरस्र, वृत्त, भद्रासन, चक्र, वृषभभुज, त्रिकोण, शकट, दण्ड, पणाव, मुरज, बहुमुख, व्यजन, कूर्मपृष्ठ, धनुष, सर्प। [27]

इन आकृतियों में आयत, चतुरस्र, भद्रासन एवं वृत्त में निर्मित वास्तु के अन्तर्गत निवास करने वालों को समस्त प्रकार की सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। व्यक्ति धनी, यशस्वी एवं अनेक विद्याओं में सम्पन्न रहकर स्वस्थ जीवन व्यतीत करता है। इन आकृतियों को गृहस्थों के लिए अत्यन्त श्रेयस्कर माना गया है -

'आयंत चतुरस्रन्तु वृत्तं भद्रासनं तथा। चत्वार्येतानि कार्याणि गृहस्थेन श्रियोऽर्थिना ॥'[28]

चक्र, विषमबाहु, त्रिकोण और शकट धननाश का कारण बनता है तथा दण्डाकृति, पणवाकृति, मुरज, व्यजन, कूर्म तथा सर्प आकृति के वास्तु निर्माण से अनेक प्रकार की हानि गृहपति को उठाना पड़ती है, क्योंकि इन आकृतियों में वास्तु मण्डल में अभिहित स्थानों पर इंगित देव अनुसार संरचना कार्य संभव नहीं हो सकता। अनेक आचार्यों ने वास्तु आकृतियों के और भी बहुत से भेद माने हैं[29], परन्तु उक्त सोलह भेदों को प्रमुख माना गया है[30]।

वास्तु के निर्माण क्रम में सर्वतोभद्र, नन्दावर्त, वर्धमान, स्वस्तिक और रुचक वास्तु का अपनी स्थिति के अनुसार निर्माण गृहपति को कराना चाहिए। सर्वतोभद्र वास्तु वह है, जिसमें चारों दिशाओं में द्वार हों। नन्दावर्त में पश्चिम द्वार छोड़कर, वर्धमान में दक्षिण द्वार का परित्याग कर, स्वस्तिक में केवल पूर्व द्वार की रचना एवं रुचक वास्तु में पूर्व तथा पश्चिम द्वार की रचना की जाती है। स्वस्तिक तथा रुचक वास्तु मध्यम माने गये हैं। वहाँ अन्य वास्तु निवास आदि के लिए श्रेष्ठ समझे गये हैं। वास्तु के नियमों के अनुसार किसी भी प्रकार के वास्तु में पूर्व द्वार इन्द्र के स्थान पर, दक्षिण द्वार बृहत्क्षत्, पश्चिम द्वार पुष्पदन्त एवं उत्तर द्वार का निर्माण भल्लाट देवता के स्थान पर करना चाहिए[31]।

चूँकि वास्तु पुरुष स्वयं एक तात्विक देवता के रूप में वेद आदि शास्त्रों में अभिहित हुआ है, अतः मानव के सर्वविध कल्याण हेतु यह आवश्यक है कि उसके स्वरूप एवं आकृति का निर्माण तदनुरूप हो अन्यथा वह कई प्रकार से वास्तुपति के लिए अहितकर सिद्ध होता है। वास्तु विग्रह को अनुकूल बनाने के लिए कतिपय विशिष्ट सावधानियाँ रखी जा सकती हैं।

भूमि-परीक्षण एवं भूमि-शोधन : भूमि-चयन एवं उसका परीक्षण वास्तुशास्त्र का सर्वप्रमुख चरण है। मत्स्यपुराण तथा बृहत्संहिता में भूमि का वर्ण, रस, खात-परीक्षा (गड्ढा-परीक्षण), दीप-परीक्षण तथा बीज-अंकुरण परीक्षण वर्णित हैं। इसके साथ ही 'शल्योद्धार' (भूमि के भीतर दबे अवांछित पदार्थों को निकालना) तथा नींव निर्माण से पूर्व स्थल-सुधार की वैज्ञानिक प्रक्रिया का विधान दिया गया है[32]।

द्वार निर्माण : भवन में द्वारों की संख्या सम होनी चाहिए विषम नहीं जैसे - दो, चार, छः, आठ, दस आदि। गवाक्ष या खिड़कियाँ भी सम संख्या में हों, किन्तु दोनों को मिलाकर संख्या निर्धारित न की जाये। बीम के नीचे कुएँ अथवा पेड़ के सामने, किसी अन्य के द्वार के सम्मुख, मंदिर या देवमूर्तियों के सामने तथा मार्ग के ऊपर द्वार नहीं बनाना चाहिए। द्वार की ऊँचाई, चौड़ाई से दो गुनी होनी चाहिए। समरांगण सूत्रधार के अनुसार द्वार संतुलित एवं सुव्यवस्थित होना चाहिए तथा एक मंजिल के ऊपर की मंजिलों में नीचे के द्वार के ठीक ऊपर ऊपरी मंजिल का द्वार निर्मित किया जाना चाहिए। इसी तरह सीढ़ियों के द्वार भी एक-दूसरे के ऊपर बने हों तथा सीढ़ियाँ यदि दक्षिणाभिमुख रहें तो अधिक श्रेष्ठ होगा[33]।

द्वार-विन्यास एवं भूम्याकार-विज्ञान : वास्तुसौख्यम् में आयताकार, वर्गाकार (चतुरस्र), वृत्ताकार एवं भद्रासन सहित 16 प्रकार की भूम्याकृतियों का उल्लेख प्राप्त होता है:

‘आयतंचतुरस्रं वृत्तं भद्रासनं तथा...’[34]

आयताकार एवं वर्गाकार भूखण्डों को प्रकाश, वायु और संरचनात्मक स्थिरता की दृष्टि से सर्वोत्तम माना गया है। मत्स्यपुराण तथा बृहत्संहिता में द्वारों की सम संख्या, आकार-अनुपात और द्वार-वेध के निषेध पर बल दिया गया है।

मर्मस्थान, शल्य और स्थापत्यिक संवेदनशीलता : बृहत्संहिता के अनुसार, वास्तु-मण्डल में रेखाओं के प्रतिच्छेदन बिन्दुओं तथा पदों के जोड़ों को 'मर्मस्थान' कहा गया है, जहाँ भार-रहित और बाधारहित नियोजन आवश्यक है:

‘सम्पातो वंशानां मध्यानी समानि यानि च पदानाम्।
मर्माणि तानि विन्द्यान्न तानि परिपीडयेत् प्राज्ञः॥’[35]

परवर्ती श्लोकों में मर्म-पीड़न व शल्य-दोषों के निवारण पर सूक्ष्म विचार प्रस्तुत किया गया है[36]।

गृह-विन्यास, वृक्ष एवं हरित-पर्यावरण : बृहत्संहिता में गृह के चारों ओर रोपे जाने वाले वृक्षों की दिशा (पूर्व में वट, दक्षिण में उदुम्बर, पश्चिम में पिप्पल, उत्तर में प्लक्ष), जलाशय की स्थिति तथा भूमिगत जल-स्रोतों पर गहन विचार किया गया है[37]। मत्स्यपुराण भी प्राकृतिक पर्यावरण के संतुलन को अनिवार्य मानता है, जो आधुनिक हरित भवन सिद्धान्तों के अनुकूल है[38]।

गृह से नगर तक वास्तु का विस्तार : भारतीय वास्तुशास्त्र का क्षेत्र केवल व्यक्तिगत गृह तक सीमित न होकर प्रासाद, दुर्ग, ग्राम, नगर एवं राज्य नियोजन तक विस्तृत है। अग्निपुराण में देश/राज्य के स्थापत्यिक नियोजन हेतु विशाल मण्डल-विधान का निर्देश प्राप्त होता है: ‘देशसंसंस्थापने वास्तु चतुस्त्रिंशच्छतं भवेत्॥’[39]

Year-7 Volume: III, July-September, 2025 Issue-27 ISSN: 2582-1296 (Online)
The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities
Website: www.theasianthinker.com Email: asianthinkerjournal@gmail.com

हिताहित की अवधारणा के पाँच आयाम : वास्तुशास्त्र में मानव के 'हिताहित' का मूल्यांकन निम्नलिखित पाँच आयामों में सम्भव है:

1. **शारीरिक हित:** पर्याप्त प्रकाश, संवातन, तापीय आराम एवं पेयजल सुरक्षा[40]।
2. **मानसिक हित:** निजता, स्थानिक संतुलन एवं कोलाहल-मुक्ति।
3. **सामाजिक हित:** पारिवारिक सामंजस्य एवं सार्वजनिक-निजी क्षेत्रों का स्पष्ट विभाजन।
4. **आर्थिक हित:** निर्माण सामग्री की इष्टतम उपयोगिता एवं ऊर्जा-दक्षता।
5. **पारिस्थितिक हित:** जल-संरक्षण एवं स्थानीय वनस्पति संरक्षण[41]।

उपसंहार

प्रस्तुत शोध-पत्र का अनुशीलन यह निर्विवाद रूप से सिद्ध करता है कि भारतीय वास्तु-परम्परा केवल गृह-निर्माण के नियमों, दिशा-निर्देशों अथवा शुभाशुभ फल-कथन तक सीमित कोई संकीर्ण या अन्धविश्वास-आधारित विद्या नहीं है। वैदिक ऋचाओं से अंकुरित होकर पौराणिक एवं उत्तरवर्ती स्थापत्य ग्रन्थों में पल्लवित यह परम्परा वास्तव में **स्थानिक मनोविज्ञान, मानव-स्वास्थ्य, पर्यावरण-संतुलन और स्थापत्यिक ज्यामिति का एक गहन एवं बहुआयामी विज्ञान** है।

इस अध्ययन के प्रमुख निष्कर्षों एवं उनकी सार्वकालिक प्रासंगिकता को निम्नलिखित बिन्दुओं के अंतर्गत रेखांकित किया जा सकता है:

1. **'हिताहित' की सर्वांगीण संकल्पना:** ऋग्वेद के वास्तोष्पति-सूक्त में *'शं नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे'* के माध्यम से मानव (द्विपद) एवं पर्यावरण-पशुधन (चतुष्पद) दोनों के निरोग रहने और सर्वकल्याण की जो मूल कामना व्यक्त की गई थी, वही 'हित' की अवधारणा इस सम्पूर्ण शास्त्र का प्राण-तत्त्व है। वास्तुशास्त्र मानव के 'हिताहित' को केवल भौतिक सुखों तक सीमित न मानकर शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, आर्थिक और पारिस्थितिकीय—इन पाँचों स्तरों पर सुनिश्चित करता है।
2. **मिथक से ज्यामितीय एवं कार्यात्मक विज्ञान का सफर:** वास्तुपुरुष की पौराणिक उत्पत्ति तथा 64-पद व 81-पद वास्तुपुरुष-मण्डल की व्यवस्था अनियंत्रित प्राकृतिक शक्तियों और असीमित रिक्त स्थान को एक सुव्यवस्थित, मापित और कार्यात्मक संरचना में परिणत करने का उत्कृष्ट स्थापत्यिक प्रतिमान प्रस्तुत करती है। इसमें 'मर्मस्थानों' की सुरक्षा का सिद्धान्त आधुनिक संरचनात्मक इंजीनियरी में भार-प्रबंधन और तनाव-बिन्दुओं की अवधारणा से सीधे मेल खाता है।
3. **आधुनिक स्वस्थ-आवास एवं हरित भवन से तादात्म्य:** शास्त्रीय ग्रन्थों (जैसे बृहत्संहिता व मत्स्यपुराण) में वर्णित भूम्याकार-चयन, प्राकृतिक प्रकाश, वायु-संचार (संवातन), द्वारों का आनुपातिक अनुपात, जल-स्रोतों का नियोजन तथा विशिष्ट दिशाओं में वृक्षारोपण के नियम आधुनिक विश्व स्वास्थ्य संगठन के 'हाउसिंग एंड हेल्थ गाइडलाइन्स' तथा हरित भवन निर्माण के सिद्धान्तों के पूर्णतः अनुकूल हैं।

Year-7 Volume: III, July-September, 2025 Issue-27 ISSN: 2582-1296 (Online)
The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities
Website: www.theasianthinker.com Email: asianthinkerjournal@gmail.com

4. **दार्शनिक एवं चेतना-विषयक परिप्रेक्ष्य:** वास्तु-मण्डल केवल ईंट और पत्थरों की संरचना नहीं है, अपितु यह ब्रह्माण्डीय ऊर्जा और मानवीय चेतना के समन्वय का प्रतीक है। प्राचीन आचार्यों ने गृह को मात्र भौतिक आश्रय नहीं माना, अपितु उसे जीवित प्राणी की भाँति 'शरीर' और 'हृदय' से युक्त संवेदनशील इकाई के रूप में देखा। 'ब्रह्मस्थान' को भवन का खुला और भार-मुक्त 'हृदय' स्वीकार करना इस बात का संकेत है कि गृह का केन्द्रस्थल शून्य नहीं, अपितु ऊर्जा का स्रोत है। यह स्थान आकाश तत्व का प्रतिनिधि है, जहाँ से जीवन-शक्ति का संचार सम्पूर्ण गृह में होता है। वास्तु-शास्त्र में प्रत्येक दिशा और प्रत्येक खण्ड को किसी न किसी देवता अथवा शक्ति का अधिष्ठान माना गया है। इस प्रकार गृह का निर्माण केवल वास्तुकार की कला नहीं, अपितु ब्रह्माण्डीय व्यवस्था का प्रतिरूप है। जब गृह का केन्द्र 'ब्रह्मस्थान' खुला और भार-मुक्त रखा जाता है, तो यह प्रतीक बनता है कि जीवन का मूल आधार शुद्धता, प्रकाश और ऊर्जा का प्रवाह है। इस दृष्टि से गृह को एक जीवित, श्वास लेने वाली इकाई समझा गया है, जो अपने निवासियों के साथ संवाद करती है और उनके स्वास्थ्य, सुख तथा मानसिक शान्ति को प्रभावित करती है।

भावी अनुसंधान की दिशा:

वास्तुशास्त्र को आधुनिक अकादमिक जगत् में एक प्रामाणिक एवं वैज्ञानिक विद्या के रूप में पुनः प्रतिष्ठित करने हेतु भावी अनुसंधान को तीन चरणों में आगे बढ़ना अनिवार्य है:

- **पाठालोचन :** प्राचीन संस्कृत ग्रन्थों के शुद्ध पाठों, श्लोक-संख्याओं और सन्दर्भों का प्रामाणिक निर्धारण।
- **स्थापत्य-इतिहास :** शास्त्रीय सिद्धान्तों तथा प्राचीन ऐतिहासिक भवनों व नगर-योजनाओं के मध्य सम्बन्धों का तुलनात्मक अध्ययन।
- **अनुभवजन्य परीक्षण :** आधुनिक वैज्ञानिक उपकरणों द्वारा वास्तु-सिद्धान्तों के भौतिक, तापीय, प्रकाशिक और पर्यावरणीय मानकों का प्रत्यक्ष मापन।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि वैदिक वास्तोष्पति से लेकर वास्तुपुरुष-मण्डल तक की यह यात्रा भारतीय ज्ञान-परम्परा की उस अनूठी दृष्टि को उजागर करती है, जहाँ स्थापत्य केवल 'स्थल को घेरने की कला' नहीं है, अपितु 'मानव जीवन को प्रकृति, ब्रह्माण्ड और चेतना के साथ सामंजस्यपूर्ण रूप से जोड़ने की एक वैज्ञानिक साधना' है। यह शोध-पत्र वास्तुशास्त्र को समकालीन वैश्विक स्थापत्य-विमर्श में एक प्रामाणिक, बहुविषयक और कल्याणकारी आधार-स्तम्भ के रूप में स्थापित करता है।

सन्दर्भ-सूची

[1] ऋग्वेद, 7.54.1-3

[2] अथर्ववेद, 9.3.1-20; 6.106.3

Year-7 Volume: III, July-September, 2025 Issue-27 ISSN: 2582-1296 (Online)
The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities
Website: www.theasianthinker.com **Email**: asianthinkerjournal@gmail.com

[3] मत्स्यपुराण, अध्याय 252 (श्लोक 1-19)
[4] मत्स्यपुराण, अध्याय 253 (श्लोक 19-21)
[5] बृहत्संहिता, वास्तुविद्या, अध्याय 52 (श्लोक 43-45)
[6] विश्वस्वास्थ्य संगठन, हाउसिंग एंड हेल्थ गाइडलाइन्स, 2018
[7] विश्वस्वास्थ्य संगठन, स्ट्रेटेजीस फॉर हैल्दी, इक्विटेबल एंड सस्टेनेबल हाउसिंग
[8] शब्दकल्पद्रुम, पृ. 358
[9] संस्कृतशब्दार्थ - कौस्तुभ, पृ. 1008
[10] वेदान्तसार (सदानन्द)
[11] ब्रह्मविनय, श्लोक 64
[12] ऋग्वेद, 7.54.1-3
[13] अथर्ववेद, 9.3.1-20; 6.106.3
[14] मत्स्यपुराण, अध्याय 252 (श्लोक 1-19)
[15] मत्स्यपुराण, अध्याय 253 (श्लोक 19-21)
[16] मत्स्यपुराण, अध्याय 253 (श्लोक 47-51)
[17] मत्स्यपुराण, अध्याय 253 (श्लोक 19-21 तथा 47-51)
[18] मत्स्यपुराण, अध्याय 253 (श्लोक 22-46)
[19] काप्रा, फ्रिट्जॉफ, द ताओ ऑफ फिजिक्स
[20] बृहदारण्यकोपनिषद्, 1.5.3-7
[21] वैदिक विज्ञान और भारतीय संस्कृति, पृ. 112
[22] वेदभूमिका विज्ञान वीथिका, पृ. 7
[23] ऋग्वेद, हिरण्यगर्भसूक्त - 1
[24] बृहत्संहिता, 1/42-45
[25] मत्स्यपुराण, 253/301/35
[26] अग्निपुराण, 93/35
[27] राजमार्तण्ड, 222/223
[28] वास्तुसौख्यम्, 7/222
[29] विश्वकर्मप्रकाश, 1/27-60
[30] वास्तुसौख्यम्, 7/221
[31] बृहत्संहिता, वास्तुविद्या, अध्याय 52/51-66

The Asian Thinker

Year-7 Volume: III, July-September, 2025 Issue-27 ISSN: 2582-1296 (Online)
The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities
Website: www.theasianthinker.com **Email**: asianthinkerjournal@gmail.com

[32] बृहत्संहिता, वास्तुविद्या, अध्याय 52 (श्लोक 43-45)
[33] विश्वकर्मप्रकाश, 1/25-45
[34] बृहत्संहिता, वास्तुविद्या, अध्याय 52 (श्लोक 51-66)
[35] बृहत्संहिता, वास्तुविद्या, अध्याय 52 (श्लोक 67-80)
[36] वास्तुसौख्यम्, 7/225-228
[37] बृहत्संहिता, वास्तुविद्या, अध्याय 52 (श्लोक 83-96)
[38] विश्वस्वास्थ्य संगठन, हाउसिंग एंड हेल्थ गाइडलाइन्स, 2018
[39] अग्निपुराण, 93/35-39
[40] विश्वस्वास्थ्य संगठन, हाउसिंग एंड हेल्थ गाइडलाइन्स, 2018
[41] वास्तुसौख्यम्, 7/225-228

The Asian Thinker